प्राचीन हिन्दू धार्मिक ग्रन्थों में वर्णित 'आदर्श राजा के धर्म' की वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य में प्रासंगिकता

डॉ0 बिपिन दूबे*

सारांश

आज वर्तमान राजनीति में जिस तरह से गिरावट देखने को मिल रही है वह चिन्ता का विषय है। भारतवर्ष स्वयं की श्रेष्ठता के लिए विश्वविख्यात रहा है, परन्तु दुर्भाग्यवश कुछ समय के लिए विदेशी शासकों के शासन ने भारत के सम्पूर्ण ज्ञान–विज्ञान एवं संस्कृति को नष्ट कर दिया। आज हमारी संस्कृति में पाश्चात्य संस्कृति ऐसे घुल गयी है कि हम सिर्फ उनका अनुकरण करते दिख रहे हैं। हमारे नेतागण जनता के हितों को नजर अंदाज कर सिर्फ अपनी सत्ता बचाने का खेल, खेल रहे हैं। उनकी अपनी गरिमा या किसी प्रकार के वजूद से कोई मतलब नहीं रह गया है। अपने स्वार्थ हेतु सिर्फ धन लुटाने में लगे हैं। यही कारण है कि, कई नेता जेलों में बन्द हैं, तो कितने ही नेता न्यायालय के चक्कर काट रहे हैं। हम प्राचीन भारत में यह देखते हैं कि राजा अपनी प्रजा सुख हेतु सर्वस्व न्यौछावर कर देने के लिए हमेशा तत्पर रहते थे, परन्तु आज उसका अभाव दिख रहा है। लगभग सभी जनप्रतिनिधि राजा बनने के लिए तो लालायित हैं, परन्तु राजा के धर्म को भूल गये हैं। उन्हें अपने स्वार्थ सुख के अलावा प्रजा की पीड़ा का आभास भी नहीं हो रहा है। आजादी के समय तक कोई भी जन–प्रतिनिधि राजकोष से एक पैसा तक नहीं लेते थे, परन्तु आज M.P.(सांसद) और M.L.A.(विधायक) या M.L.C. (विधान पार्षद) सिर्फ अपने वेतन आदि बढ़ाने में लगे हैं, और 5 वर्षों के लिए ही सही वेतन के अलावा पेंशन भी लेते हैं। वहीं देश के सभी कर्मचारियों के पेंशन की व्यवस्था समाप्त हो चुकी है। इस स्थिति में आम जनता नेताओं से क्षुब्ध तथा जनप्रतिनिधियों को घृणा की दृष्टि से देख रही है। इसलिए इन्हें एक आदर्श राजा के धर्म को अपनाने की जरुरत है। प्रस्तुत शोधपत्र आदर्श राजा के धर्म पर केन्द्रित है। प्राचीन तथा आधुनिक दोनों में राजा के लिए धर्म के औचित्य को स्वीकार किया गया है।

शब्द संकेत : M.L.A.(विधायक) या M.P. (सांसद) पृथु (प्राचीनकाल में प्रतापी राजा) गांधारी (महाभारतकालीन हस्तिनापुर की रानी) युधिष्ठिर (पांडवों का राजा) 'द प्रिंस' (पुस्तक) महा0 शा0 (महाभारत, शान्ति पर्व) स्कन्द, मा0 (स्कन्द महापुराण) M.L.C.(विधानपार्षद)

शोध पद्धति

इस शोधपत्र की शोधपद्धति ऐतिहासिक, तुलनात्मक एवं विश्लेषणात्मक है। इस शोधपत्र में प्राचीन आदर्श राजाओं के धर्म जो प्राचीन पुस्तकों में वर्णित हैं, उसे आज के शासकों को प्रेरित करने हेतु तुलनात्मक रुप में प्रस्तुत किया गया है। यह शोधपत्र प्राचीनकाल के प्रमाणों के साथ ऐतिहासिक भी है।

शोधपत्र के अध्ययन के उद्देश्य

इस शोधपत्र का उद्देश्य यह है कि, वर्तमान शासकों में जो अवगुण (भष्टाचार, भाई–भतीजावाद, चरित्रहीनता, सत्तालोलुपता) देखने को मिल रही है उसे दूर करने का प्रयास किया जाय। इसी संदर्भ में इस शोधपत्र के द्वारा आदर्श राजा के धर्म का उल्लेख किया गया है। जिसे आज के शासक अपनाकर आदर्श शासक बन सकते हैं तथा शासन से भ्रष्टाचार आदि कमियों को दूर किया जा सकता है, जो आज के समय में नितान्त आवश्यक है, क्योंकि आज के समय में M.L.A. (विधायक) M.P. (सांसद) M.L.C. (विधानपार्षद) भले ही प्रजातंत्रीय प्रतिनिधि के रुप में हैं, परन्तु वे आज जनकल्याणकारी कार्यों से दूर सिर्फ अपने वेतन आदि बढ़ाने और 5 वर्षों के बाद पेंशन लेने के ही अधिकारी रह गये हैं, सत्ता पाने के लिए किसी भी स्तर तक चले जा रहे हैं। आज जनता का विश्वास उनपर से उठ रहा है। जनता व्याकुल है और महात्मा गांधी जैसे भारतीय राजनीतिक विचारक ने 'रामराज्य' की कल्पना उपरोक्त संदर्भ में ही की है। यह शोधपत्र लोकप्रशासन के लिए उपयोगी तो होगा ही, साथ ही राजनीतिविज्ञान के लिए भी उपयोगी है। यह समाजशास्त्र, दर्शनशास्त्र एवं धर्मशास्त्र के लिए भी विषयवस्तु अध्ययन का स्रोत होगा। इस शोधपत्र से शासक एवं भावी प्रतिनिधि एक आदर्श समाज की स्थापना कर सकेंगे, जिससे देश एवं समाज का विकास संभव है।

आदर्श राजा का धर्म

विष्णुपुराण में भगवान विष्णु मनुष्यों को सावधान करते हुए कहते हैं कि, "धर्म को छोड़कर बंधु–बांधव, रिश्ते–नाते,

* अतिथि व्याख्याता, राजनीति विज्ञान विभाग, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर।

धन–सम्पति, पुत्र–पौत्र आदि कोई भी साथ नहीं देता, केवल धर्म ही प्राणी के साथ जाता है।"[1] राजा के मुख्य धर्म को बताते हुए भगवान विष्णु कहते हैं कि, ''राजा का मुख्य कर्तव्य है, प्रजा का पालन करना तथा वर्णाश्रम धर्म की व्यवस्था करना। राजा को सदा यह देखते रहना चाहिए कि, लोग अपने–अपने वर्ण तथा आश्रम के अनुसार अपने–अपने धर्म का परिपालन कर रहे हैं या नहीं ? यदि नहीं तो इसके लिए यथोचित व्यवस्था करनी चाहिए।''[2] विष्णु पुराण इस प्रकार राजा के लिए एक आदर्श धर्म स्थापित करता है।

प्रजा का दुःख ही राजा के लिए सबसे बड़ा दुःख होना चाहिए। शांतिपर्व में कहा गया है कि, 'धर्मेण विधृताः प्रजाः'। महाभारत में भी भगवान शंकर ने पार्वती माता को धर्म के बारे में कहा है कि, ''सबसे बड़ा धर्म है सत्य तथा सबसे बड़ा अधर्म है असत्य''।[3] अर्थात् राजा को कभी भी असत्य का प्रयोग नहीं करना चाहिए। धर्म ही राजा का सच्चा सहायक है। अतः उसे सदा धर्म का ही सेवन करना चाहिए।[4] महाभारत के द्वारा राजा के लिए यह एक आदर्श धर्म बताया गया है, जो नितान्त आवश्यक है।

प्राचीनकाल में जब कोई राजा नहीं था, तो धर्म के प्रभाव से ही मनुष्य दूसरे मनुष्य की रक्षा करता था।[5] सर्वप्रथम वेन के पुत्र महाप्रतापी परम धार्मिक 'पृथु' को राजा की उपाधि से विभूषित किया गया था, क्योंकि वे सदा प्रजा का अनुरंजन ही करते थे अर्थात् प्रजा की सुख और शांति की व्यवस्था करना ही उनका एक मात्र लक्ष्य था।

आधुनिक विचारकों ने जहाँ राजा के अधिकारों की विशद विवेचना कर दी है,वहीं राजा के कर्तव्यों को बताने में कहीं ना कहीं कुछ कमी दिखायी है और इस तरह से आधुनिक विचारधारा चाहे वह प्लेटो, अरस्तू, हॉब्स, लॉक या रुसो किसी की भी हो राजा की निरंकुश सत्ता का समर्थन करती है। वहीं दूसरी तरफ, प्राचीनतम ग्रंथों यथा–वेद, पुराण, रामायण, महाभारत आदि में हमें राजोचित धर्म तथा कर्त्तव्य की विशद विवेचना देखने को मिलती है। यहाँ अधिकारों की तुलना में राजा के कर्तव्यों को प्रमुखता दी गई है, क्योंकि जब राजा स्वयं धर्म मार्ग पर चलेगा तभी वह प्रजा से ऐसा करने की आशा कर सकता है। राजा को स्वयं धर्म पथ का आश्रय लेना चाहिए। इसमें हमारे धार्मिक ग्रन्थ, पाश्चात्य ग्रन्थों से ज्यादा उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं।

महाभारत के शांतिपर्व में स्पष्ट लिखा हुआ है कि, ''प्रजा को धर्मपथ पर परिचालित करने के लिए राजा को स्वयं धर्मपथ का आश्रय लेना चाहिए।[6] वस्तुतः धर्मरक्षार्थ ही राजा की नियुक्ति की गई है और जब भी राजा धर्म के मार्ग से विचलित होगा प्रजा विद्रोह कर देगी,जैसा कि महाभारत के उद्योगपर्व में लिखा है कि, ''राजा वेन जब धर्मपथ से भ्रष्ट हो गये तो प्रजा विद्रोही हो गयी और अंत में अपने कर्मदोष के कारण उन्हें जीवन से हाथ धोना पड़ा।[7] इसलिए राजा को पहले धर्म का अवलंबन करना चाहिए तभी प्रजा भी धार्मिक एवं हिंसा–द्वेष से शून्य होकर राजभक्त बनेगी एवं दोनों ही सुख–शांति से जीवन–यापन करने में समर्थ होंगे। इस प्रकार शांतिपर्व आज के समय में उपयोगी सिद्ध हो रहा है।

शास्त्रों से पता चलता है कि प्राचीनकाल के अधिकांश प्रतापी राजा धार्मिक ही थे। रामचन्द्रजी ने धर्म का अवलंबन करके ही राज्य किया था।[8] इसी कारण, उनके राज्य में दुर्भिक्षा, व्याधि, अकालमृत्यु, परपीड़ा, चोरी, हिंसा आदि का नाम भी नहीं था। प्रजारंजन विशेष लक्ष्य होने के कारण ही वे देवी सीता का त्याग करने से तनिक भी नहीं हिचकिचाए और सीता का परित्याग करके राजधर्म का पालन किया एवं आदर्श शासकों के लिए एक कीर्तिमान स्थापित किया।

महाभारत में अनेक स्थानों पर 'यतो धर्मस्ततो जयः' का प्रयोग देखने को मिलता है। यहाँ तक कि, जब युवराज दुर्योधन ने युद्धक्षेत्र में जाने के पहले माता से आशीर्वाद मांगा तो गांधारी ने भी यही कहा कि 'जहाँ धर्म है वहीं जय है'। महाभारत शासकों के लिए आदर्श स्थापित करता है, कि शासक को क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए।

हर राजा का पुनीत कर्तव्य है कि, वह धर्म विभाग का संचालन धार्मिक आत्मज्ञानी महापुरुषों के हाथ में सौंप दे। राज्य की रक्षा के लिए अर्थसंग्रह की आवश्यकता है, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता। इसी उद्देश्य से प्रजा से राजा के राजस्व ग्रहण की व्यवस्था होती है, परन्तु प्रजा कहीं करभार से पीड़ित न हो जाय, इस पर विशेष ध्यान देकर ही कर की मात्रा निर्धारित करनी चाहिए। सूर्य जिस प्रकार जल अवशोषित करके जीवों के उपकारार्थ उसे पुनः वारिधारा के रुप में बरसा देता है, राजा को भी उसी प्रकार राजस्व ग्रहण करके प्रजा के हितार्थ ही उसका व्यय कर देना चाहिए और यही धर्मसंगत है।[9] यह विचार आज के समय में बहुत प्रासंगिक लग रहा है, जिससे जनता सुख का अनुभव करेगी।

आज वर्तमान राजनीति में भी प्राचीनतम महाकाव्य महाभारत की ये सारी बातें उतनी ही सारगर्भित और सार्थक हैं, जितनी उस काल में हुआ करती थीं। अगर आज के शासक भी देश के वास्ते वास्तविक अथवा औपचारिक प्रधान धर्म की नीति का अनुसरण करें तो गृहयुद्ध, आंतरिक अशांति, आंदोलन, हड़ताल आदि समस्याओं से आसानी से निपटा जा सकता है किन्तु आज के शासकों में छल–कपट, मिथ्याचार, आडम्बर, मात्र आश्वासन, कोरे नारों और प्रदर्शनों की भरमार है। आधुनिक

राजनीतिक विचारकों में से विरले ही किसी ने राजनीति के लिए धर्म की अवश्यंभाविता को स्वीकार किया है। भारतीय राजनीतिक विचारक महात्मा गाँधी ने रामराज्य की कल्पना की और एक अलग राजनीतिक विचार को रखा परन्तु हमारे धार्मिक ग्रन्थों में राजा के लिए धर्म की व्यवस्था देश समाज के लिए उपयोगी है।

आधुनिक काल में हम महात्मा गाँधी की राजनीति में सत्य, अहिंसा, सदाचार के पालन की अवधारणा देखते हैं। गाँधी जी ने जिस सत्याग्रह का इस्तेमाल करके अंग्रेजों को भारत छोड़ने पर विवश किया था उस सत्याग्रह का इस्तेमाल महाभारत काल में भी हुआ करता था जिसका प्रमाण हमें शांन्तिपर्व के 105 वें अध्याय में वर्णित कालवृक्षीय मुनि के द्वारा किए गए राज्य की प्राप्ति के लिए विभिन्न उपायों में मिलता है। काल वृक्षीय मुनि कहते हैं कि ''राजन! तुम दंभ, काम, क्रोध, हर्ष और भय को त्याग कर हाथ जोड़, मस्तक झुकाकर शत्रुओं की सेवा करो।[10] इस बात से यह साबित होता है कि, सत्याग्रह और अहिंसा जैसी धारणा आज के युग में ही नहीं वरन् अति प्राचीनकाल में भी अपनी इच्छा पूर्ण करने के लिए की जाती रही है, इसलिए यह धारणा गलत है कि सत्याग्रह और अहिंसा वर्तमान युग की देन है। इससे हमें प्राचीन तथ्य को नहीं छुपाना चाहिए।

राजधर्म सब धर्मों में प्रधान है।[11] सारी विद्याएँ राजधर्म में ही निहित हैं। महाभारत के शांतिपर्व में भी लिखा है कि, ''राजनीति की उत्पत्ति का प्रमुख हेतु संपूर्ण जगत की रक्षा तथा धर्म, अर्थ एवं काम की स्थापना है।[12] शांतिपर्व में भीष्म पितामह ने युधिष्ठिर को राजा का धर्म बताते हुए कहा है कि, ''अधर्म द्वारा पृथ्वी पर विजय प्राप्त करने की इच्छा कभी भी नहीं करनी चाहिए, क्योंकि अधर्म से विजय प्राप्त कर कौन राजा सम्मान पा सकता है?[13] भीष्म का यह आदेश आज के शासक अपने कार्यों में सर्वोपरि रखें, तो जनता को किसी प्रकार का कष्ट नहीं हो सकता है।

राजा का श्रेष्ठ धर्म है, ''समस्त प्राणियों की रक्षा करना[14] पर यह रक्षा कैसे की जाय? इसे भी शांतिपर्व में स्पष्ट किया गया है ''जैसे साँप खाने वाला मोर विचित्र पंख धारण करता है उसी प्रकार धर्मज्ञ राजा को समय–समय पर अपना अनेक प्रकार का रुप प्रकट करना चाहिए।[15] अर्थात् जिस कार्य के लिए जो हितकर हो, उसमें वैसा ही रुप प्रकट करे। उदाहरण के लिए, अपराधी को दण्ड देते समय उग्ररुप तथा दीनों पर अनुग्रह करते समय शांत एवं दयालु रुप। इससे जनता भी कष्ट का अनुभव नहीं करेगी और शासक के इस प्रकार के कार्यों द्वारा राज्य की कानून व्यवस्था भी अच्छी होगी।

धर्म का राजनीतिक महत्व कूटनीति की विद्याओं के आचार्य इटली के मैकियावेली तक स्वीकार करते हैं। उन्होंने भी अपने ग्रंथ 'द प्रिंस' में नरेशों को धार्मिक संस्कारों की विशुद्धता की हिदायत देते हुए कहा है, ''जो राजा और गणराज्य अपने को भ्रष्टाचार से मुक्त रखना चाहते हैं, उन्हें सर्वप्रथम धार्मिक संस्कारों की विशुद्धता को सुरक्षित रखना चाहिए तथा उनके प्रति उचित श्रद्धा दर्शानी चाहिए, क्योंकि धर्म की हानि से बढ़कर किसी देश के विनाश का और कोई कारण नहीं है।[16] राजा का जीवन यदि धर्मपालन के लिए नष्ट भी हो जाता है तो इसमें कोई दोष नहीं है।[17] इस प्रकार प्राचीनकाल की यह धारणा आज के शासकों में देखने को नहीं मिलती है और वे अपनी विचारधारा और साख को भी सत्ता पाने के लिए दांव पर लगा देते हैं। इसका स्पष्ट उदाहरण महाराष्ट्र में देखने को मिला कि शिवसेना और भाजपा एक साथ लड़ी परन्तु मुख्यमंत्री पद हेतु शिवसेना प्रमुख ने कई ऐसी शर्तों को माना जिसकी जनता ने कभी कल्पना भी नहीं की थी और भाजपा का साथ छोड़ मुख्यमंत्री पद को प्रमुखता दी।

हम अन्य धार्मिक ग्रन्थों में भी आदर्श राजा के धर्म का वर्णन पाते हैं, क्योंकि हिन्दू धार्मिक ग्रन्थों के अलावा सिक्खों के श्रीगुरुग्रंथ साहिब में भी राजनीति के परिप्रेक्ष्य में राजा के कर्तव्यों की व्याख्या करते हुए धर्म की महत्ता को स्वीकार किया गया है।[18]

जहाँ के राजा और प्रजा दोनों धार्मिक होंगे वहाँ लोगों में परस्पर सौहार्द तथा सर्वत्र सुख–शान्ति का साम्राज्य होगा। एक दूसरे के प्रति लोगों में आत्मीयता, स्नेह तथा अपनत्व की भावना रहेगी। इन धार्मिक ग्रन्थों में वर्णित आदर्श शासकों की प्रासंगिकता आज के राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में नितांत आवश्यक है।

जिस प्रकार धर्म जगत का आधार माना गया है। उसी प्रकार समस्त लोक की प्रतिष्ठा सत्य पर ही आधृत है। अतः सत्य का पालन करना ही राजाओं का प्रधानकर्म है, सनातन आचार है तथा राज्य भी सदैव सत्यरुप है। सत्य में ही संपूर्ण लोक प्रतिष्ठित है। मुण्डकोपनिशद् में लिखा है ''सत्य की ही विजय होती है, असत्य की नहीं''[19] इसे स्पष्टतः हम शांतिपर्व में भी देखते हैं। जहाँ लिखा गया है कि,'यस्मिन धर्मो विराजते तं राजयं प्रयक्षते।' अर्थात जिसमें धर्म विराजता है वही राजा कहलाने के योग्य है।[20] धर्म क्या है? इस प्रश्न की व्याख्या करते हुए धर्माचार्यों ने कहा है कि, जिस कर्म के द्वारा मानव का इस लोक में कल्याण होता है और परलोक में उसे उत्तम स्थान प्राप्त होता है वही धर्म है। कहने का तात्पर्य है कि राजा जनता को सुख दे वही धर्म है और वही राजा धार्मिक है।

सत्य और धर्मविहीन राजनीति आरम्भ में भले ही चमत्कारिक सफलता दिखलाए पर अंत में वह पतन की ओर ही ले जायेगी। समस्त महाभारत इसका ज्वलंत उदाहरण है। धर्म विरुद्ध कूटनीति का अनुसरण करके दुर्योधन को चौदह वर्ष के लिए अतुल साम्राज्य का उपभोग अवश्य मिल गया पर अंत में पूर्ण पतन ही प्राप्त हुआ। धर्मनीति का अनुगामी बनकर युधिष्ठिर को चौदह वर्ष वनों में भटकना पड़ा पर अंत में साम्राज्य व सिंहासन प्राप्त हुआ। इतिहास तथा पुराणों में सर्वत्र यही दिखलाया गया है कि, जहाँ धर्म होता है, वहीं विजय होती है। इसके अतिरिक्त धर्म को रक्षित तथा रक्षक दोनों माना गया है। यदि हम अपने धर्म की रक्षा करते हैं तो दूसरी तरफ धर्म हमारी रक्षा करता है।[21] आज के समय में शासकवर्ग ऐसा अनुसरण करे तो भारत देश पुनः विश्व गुरु बन सकता है।

महाभारत के एक प्रसंग में जब भीमसेन ने धर्मराज युधिष्ठिर से अपने राज्य को बलपूर्वक वापस लेने की प्रार्थना की तो महाराज युधिष्ठिर ने उत्तर दिया, भीमसेन! राज्य, पुत्र, कीर्ति, धन ये सब एक साथ मिलकर सत्य के सोलहवें हिस्से के समान भी नहीं हैं। मैं अपने प्राणों से भी ज्यादा सत्यपालन धर्म को मानता हूँ।[22] जो मनुष्य अपने धर्म का नाश कर देता है, उसको धर्म भी नष्ट कर देता है परन्तु जो धर्म की रक्षा करता है उसकी रक्षा धर्म करता है।[23] आज के जनप्रतिनिधि इसका पालन करते तो निश्चित रुप से बिहार के पूर्व मुख्यमंत्री लालूप्रसाद यादव आज जेल में बन्द नहीं होते।

इस प्रकार के अन्य कई उदाहरण महाभारत में भरे पड़े हैं जिनसे यह प्रमाणित होता है कि, महाराज युधिष्ठिर का सम्पूर्ण जीवन ही धर्ममय था। इसी कारण आज तक वे धर्मराज के नाम से प्रसिद्ध हैं। आज भारत के सभी मुख्यमंत्रियों एवं प्रधानमंत्री को भी ऐसा अनुसरण करना चाहिए जिससे वे एक आदर्श शासक बन सकें।

रामराज्य जिसे सर्वोत्तम राज्य माना जाता है। वह भी पूर्णतः धर्म तथा सत्य पर आधारित था तभी इतना सशक्त था। रामराज्य की विशेषताओं का वर्णन करते हुए गोस्वामी तुलसीदास ने लिखा हैः–

"बयरु न कर काहू सन कोई।
रामप्रताप विषमता खोई।।
दैहिक दैविक भौतिक तापा।
राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।।
सब नर करहिं परस्पर प्रीती।
चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।।"

अर्थात् धर्म के प्रतीक राजा राम के प्रभाव से प्रजा आप–ही–आप धर्म, नीति तथा प्रीति की ओर प्रवृत होने लगी थी। इन्हीं कारणों से महर्षि शुक्राचार्य ने कहा है कि, "श्रीराम के समान राजा पृथ्वी पर न कोई हुआ है और न कभी होना ही सम्भव है।[24] हमारे शासकों को राम के आदर्शों को अपनाने की जरुरत है जिससे वे जनता के प्रिय बन सकें। रामराज्य को हम श्रीराम के प्राकट्यकाल से आज तक राज्यादर्श के रुप में याद करते आ रहे हैं। रामराज्य शासकों को अपने कर्त्तव्य पालन का सही मार्गदर्शन प्रदान करता है जिससे शासक देश और समाज का विकास कर सकते हैं।

महाभारत के शांतिपर्व के महानायक भीष्म पितामह भी देवव्रत से भीष्म इसीलिए बने क्योंकि, वो धर्म तथा नीति के पूर्ण ज्ञाता थे। उनकी नैतिक दृष्टि तथा धार्मिक विचारों का विस्तार शांतिपर्व में देखने को मिलता है। राज्य के लिए धर्म की अनिवार्यता बताते हुए शांतिपर्व में भीष्म पितामह ने कहा है कि, "धारणाद्धर्म इत्साहुः" अर्थात धारण करने वाले स्वरुप के कारण उसे धर्म कहते हैं। दूसरे शब्दों में मानवीय आचार एवं गुणों को धर्म माना गया है। आज के शासकों में इन गुणों का अभाव देखने को मिलता है।

भगवान श्रीराम द्वारा लक्ष्मण को दिये गये राजधर्मोपदेश में उन्होंने बताया कि किसी भी प्राणी की हिंसा न करना, कष्ट न पहुँचाना, मधुर वचन बोलना, सत्यभाषण करना, बाहर और भीतर से पवित्र रहना, शौचाचार का पालन करना, दीनों के प्रति दयाभाव रखना तथा क्षमा करना ये सभी चारों वर्णों तथा आश्रमों के सामान्य धर्म कहे गए हैं।[25] आज के हमारे शासक ऐसा करते हैं तो जनता तो खुशहाल रहेगी ही देश में शान्ति एवं सुव्यवस्था भी कायम होगी।

धर्म तथा नीति के परिपालन के बिना कोई भी राजा सफल नहीं हो सकता क्योंकि नीतिशास्त्र के महान विद्वान चाणक्य का पहला वाक्य है, 'सुखस्य मूलं धर्मः' अर्थात् सुख का मूल आधार धर्म ही है। अतः जिस शासक को सुख की अपेक्षा है उसे पहले राजधर्म को अपनाने की जरुरत है।

किसी भी राजा के लिए सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है– अपने राजोचित कर्तव्यों का निर्वाह करना। महाभारत में भी यह वर्णन आया है कि 'आदिदेव भगवान विष्णु से सर्वप्रथम राजधर्म ही प्रवृत हुआ है, अन्य सभी धर्म उसी के अंग हैं जो उसके बाद प्रकट हुए हैं।[26] धार्मिक तथा प्रजापालक राजा मनुष्य रुप में देवता ही है, वही समयानुसार कभी अग्नि, कभी सूर्य, कभी

मृत्यु, कभी कुबेर और कभी यमराज इस प्रकार पाँच रुप धारण करता है।[27] हमारे आज के शासक ऐसा अनुसरण करते हैं, तो किसी भी राज्य में कोई अशान्ति नहीं होगी।

जिसने अपने मन को वश में कर लिया है, क्रोध को जीत लिया है तथा शास्त्रों के सिद्धांत का निश्चयात्मक ज्ञान प्राप्त कर लिया है, जो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के प्रयत्न में निरंतर लगा रहता है, जिसे तीनों वेदों का ज्ञान है तथा जो अपने गुप्त विचारों को दूसरे पर प्रकट होने नहीं देता है वही राजा होने योग्य है। प्रजा की रक्षा न करने से बढ़कर राजा के लिए दूसरा कोई पाप नहीं है।[28] ऐसा गुण आज के अधिकांश शासकों में देखने को नहीं मिलता है। इसलिए वे वंशवाद में या स्वसुख में राजधर्म को भूल गये हैं।

सर्वप्रथम 'पृथु' को राजा कहा गया है, क्योंकि उन्होंने ही सम्पूर्ण जगत् में धर्म की प्रधानता स्थापित की थी। उन्होंने समस्त प्रजा का रंजन किया था, इसलिए वे राजा कहलाते थे।[29] उन्होंने ब्राह्मणों को क्षति से बचाया इस कारण वे क्षत्रिय कहलाये और अपने धर्म के द्वारा इस भूमि को प्रथित करने के कारण इसे बहुसंख्यक मनुष्यों द्वारा 'पृथ्वी' कहा गया।[30] राजा को धर्मपरायण के साथ–साथ विनयी होना भी आवश्यक है। नीति का मूल विनय ही है। विनय का मूल इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करना है, और इन्द्रियजयी राजा ही श्रेष्ठ होता है। अतः राजा को चाहिए कि सर्वप्रथम अपने आपको विनय से युक्त करे।[31] ऐसा करनेवाला शासक प्रजा से सम्मान पाता है तथा जनता उसे आदरभाव से पूजती है इसलिए शासकों में ऐसा गुण अवश्य होना चाहिए।

हमारी भारतीय परंम्परा में विनय तथा परोपकार को ही धर्म की संज्ञा दी गई है। गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस में स्पष्ट कहा है कि, दूसरों के हित से बढ़कर कोई धर्म नहीं है।[32] गीता के उपदेश में भगवान श्रीकृष्ण ने धर्म की प्रतिष्ठा को ही अपने अवतरण का कारण बताया है।[33] हमारी भारतीय संस्कृति उपरोक्त पोषक रही है। इसलिए यह शोधपत्र आज शासकों को प्रिय एवं जनता का सच्चा हितैषी बनाने में मदद करेगा।

धर्म का प्रथम धृति (धैर्य) बताया गया है, जबकि क्रोध मनुष्य के धैर्य को नष्ट कर देता है। अतः राजा के लिए धैर्य आवश्यक है क्रोध नहीं।[34] राजा प्रजा पर क्रोध करता है, तो वह अलोकप्रिय हो जाता है। झारखण्ड के मुख्यमंत्री रघुवर दास की हार का प्रमुख कारण यही था। महाभारत में दुर्योधन की पराजय का कारण उनका क्रोध ही बताया गया है। युधिष्ठिर में कोमलता, दया, धैर्य, शील, इन्द्रियसंयम और मनोनिग्रहरुप ये सारे गुण थे इसलिए उनकी विजय हुई।[35] शासक को निश्चित रुप से धैर्यशील आदि गुणों के साथ जनता का सच्चा हितैषी होना चाहिए और राज्य का उद्देश्य जनता का हित ही होना चाहिए।

धर्मनीति की रक्षा के लिए ही राजा हरिश्चन्द्र ने अपनी पत्नी और पुत्र को बेचा था पर धर्म का परित्याग नहीं किया। उसी धर्म की शक्ति के कारण उन्होंने पुनः अपनी पत्नी, पुत्र तथा अयोध्या का राजसिंहासन प्राप्त किया। इसलिए तो कहा गया है, 'एष धर्मः सनातनः' अर्थात धर्म सनातन होता है। आज हमारे शासक ऐसा नहीं करते हैं इसलिए यह अक्सर देखा गया है की पाँच वर्षों के पश्चात् ही मुख्यमंत्रियों को अपना पद त्याग करना पड़ता है।

इस प्रकार धर्मशास्त्रों, प्राचीन ग्रन्थों, महाकाव्य तथा अन्य अनेक पुस्तकों का अवलोकन करने पर यही साबित होता है कि प्राचीनकाल से लेकर अब तक जितने लोगों ने भी राजकाज संभाला है वो सब तभी सफल हुए हैं जब उन्होंने अपने धर्म का परिपालन किया है। शासक का धर्म ही उसे लोकप्रिय कर देगा और वह जनता पर बहुत दिनों तक शासन कर पायेगा।

जब–जब धर्म की हानि हुई है, तब–तब कोई न कोई महात्मा पैदा हुआ है और अधर्म का नाश हुआ है। प्रकृति का एक अकाट्य नियम है कि, जब राष्ट्र या समाज में जनता के धर्म, नीति, मर्यादा या संस्कृति के ऊपर भीषण संकट आता है तब–तब कोई नियामक शक्ति किसी रुप में अवश्य आकर सर्वत्र शांति की व्यवस्था कर देती है।[36] वर्तमान भारत में ऐसा देखने को मिल रहा है। वर्तमान प्रधानमंत्री से पूर्व भ्रष्टाचार, लूट आदि में कई मंत्री लिप्त थे परन्तु वर्तमान में ऐसा नहीं। वर्तमान समय में राजतंत्र और प्रजातंत्र भले ही दो अलग–अलग शासन प्रणालियाँ प्रतीत होती हैं परन्तु प्राचीन भारतवर्ष के इतिहास का सम्यक अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि, तत्कालीन राजतंत्रों का निर्धारण एवं संचालन प्रजा के अनुशासन द्वारा सम्पन्न हुआ करता था। प्रजा में अनुशासन शासक के कारण ही फैलता है, क्योंकि सीता का परित्याग करने से अयोध्यावासियों में यह भावना व्याप्त हो गयी कि वर्तमान राजा किसी की गलती के लिए माफ नहीं करेंगे।

सम्राट सर्व–समर्थ होते हुए भी 'निरंकुश' नहीं हुआ करते थे। पौरपरिषद् (अर्थात जनता के विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधियों की संयुक्त सभा जो राजा के निर्वाचन से लेकर शासकीय नीति निर्धारण तक में महत्वपूर्ण भूमिका निभाया करती थी) का अनुशासनात्मक अंकुश उन्हें सदा नियंत्रण में रखा करता था। प्राचीनकाल के शासक राजधर्म अनुसरण करने के कारण ही लोकप्रिय रहे तथा प्रजा में सुख व शान्ति कायम रही एवं देश की उन्नति हुई। आज के शासक भी ऐसा करते हैं तो

निश्चित रुप से जनता खुशहाल रहेगी और देश का विकास होगा, परन्तु ऐसा हो नहीं रहा है। आज अधिकांश मंत्री एवं जनप्रतिनिधि अपने गलत आचरण एवं व्यवहार के कारण जेल में बन्द हैं या उन पर मुकदमा चल रहा है। इसलिए यह जरुरी है कि शासक वर्ग प्राचीन हिन्दू ग्रन्थों में वर्णित राजा के राजधर्म का अनुसरण करें जिससे वे लोकप्रिय भी होंगे एवं जनता खुशहाल भी रहेगी।

कोई भी तंत्र हो उसकी सफलता का रहस्य बस राजा का प्रजा पर और प्रजा का राजा पर अनुशासन है।[37] इसलिए हम किसी तंत्र को दोषी नहीं कह सकते हैं। यह शासक पर निर्भर करता है, कि वह कैसा है। चीन का विकास इसका उदाहरण है, क्योंकि चीन में एक लोकप्रिय प्रजातंत्र नहीं है, बल्कि तानाशाही है और चीन विकसित हुआ है। वर्तमान काल में विश्व का कोई भी देश और कोई भी तंत्र सफल नहीं हो पा रहा है। आज समस्त संसार भौतिकतावादी सुख–सुविधाओं की उपलब्धता के बावजूद घोर अशान्ति से ग्रस्त हुआ हाहाकार कर रहा है। संसार का प्रत्येक देश अनाचार, अत्याचार, भ्रष्टाचार, अनैतिकता एवं नयी–नयी घातक बीमारियों, कुपोषण, मानसिक तनाव, हिंसा, बलात्कार जैसी प्रवृत्तियों की चपेट में आकर छटपटा रहा है। यदि हम इन सबके मूल कारण को खोजें तो पता चलेगा कि, जब–जब मनुष्य ने धर्मशास्त्रों में वर्णित कल्याणकारी नीतियों को त्यागकर मनमाने ढंग से जीवन यापन करना शुरु किया, मर्यादाओं की जगह उच्छृंखलता ने लिया, तब–तब उस देश और समाज का इसी प्रकार पतन हुआ है। इसलिए किसी भी राष्ट्र या शासक को चाहिए कि वह राजधर्म का पालन अवश्य करे और जनता को भी इसके लिए प्रेरित करे।

जो भारत सदैव से अपने महान् अध्यात्मिक ज्ञान तथा नैतिक मूल्यों के कारण पूरे संसार में 'जगद्गुरु' के रुप में सम्मानित रहा। आज उसी धर्मप्रिय भारत में अनाचार, पापाचार, जैसे घोर अमानवीय कृत्यों में लिप्त लोग अपने धन और बल के जरिए नेता, राजनेता बनकर देश की राजनीति को दूषित कर रहे हैं। धर्म–निरपेक्षता के नाम पर धर्म तथा नैतिक मूल्यों से विहीन कर दिया गया है। भारत की जनता इससे काफी दुःखी है। देश के लिए यह हितकर नहीं है, क्योंकि ऐसे वातावरण से कभी भी विद्रोह हो सकता है।

धर्मप्राण भारत को पापाचार, अनाचार, दुराचार, भ्रष्टाचार आदि के गर्त से निकालने का एक ही उपाय है कि, हमारे राजनेता (राजा) तथा हम (प्रजा) सब मिलकर महाभारत तथा अन्य धर्मशास्त्रों में वर्णित कर्तव्यों, सदाचार तथा नैतिक मूल्यों का पालन करने का संकल्प लें। तभी भारतवर्ष की उन्नति एवं जनता में राज्य के प्रति निष्ठा कायम होगी।

'स्कन्दपुराण' में बताया गया है कि प्रभु श्रीराम को संभवतः ऐसा आभास था कि आने वाले दिनों में शासकगण अपने कर्तव्यों का पालन भली–भाँति नहीं करेंगे। इसलिए उन्होंने भावी शासकों के नाम अपनी एक वसीयत में 'धर्म' की प्रतिष्ठा हेतु विशेष आग्रह किया है। उन्होंने कहा है कि, "यह जीवलोक पीपल के पत्ते के समान चंचल है और संसार के संपूर्ण भोग तृणवत् अत्यंत तुच्छ हैं। वास्तविक सुहद् जो एकमात्र धर्म ही है, अतः उसका कभी भी कोई विरोध न करे।[38] राजा राम की यह वसीयत वर्तमान शासकों के लिए एक आदर्श मार्ग ही नहीं प्रदान करती है, वरन् उन्हें राजधर्म अपनाने के लिए प्रेरित भी करती है।

आज विश्व में बहुत सारे वाद जैसे समाजवाद, साम्राज्यवाद, साम्यवाद, पूँजीवाद, लोकतंत्रवाद आदि प्रचलित हैं। इन सब के अपने–अपने गुण व दोष हैं, पर ये सब गुण हमें रामराज्य में मिल जाते हैं। आज जो लोग भारत में रामराज्य की रट लगा रहे हैं (जैसा कि हमारे महात्मा गाँधी भी चाहते थे) उन्हें सबसे पहले धर्म तथा कर्त्तव्य पर ध्यान देना होगा। धर्म रक्षा के लिए राजधर्म और राजनीति रक्षा के लिए सामान्य धर्म आवश्यक है। महाभारत के अनुसार परमात्मा प्रभु से सर्वप्रथम राजधर्म का ही आविर्भाव हुआ। इसके बाद ही राजधर्म के अंगीभूत अन्य धर्मों का प्रादुर्भाव हुआ।[39]

मूल्यांकन

हम यह कह सकते हैं कि, उपरोक्त वर्णित विषयों को अगर आज के राजनेता अनुसरण करते हैं, तो निश्चित रुप से भारतवर्ष में सर्वत्र शान्ति एवं भाईचारे का माहौल व्याप्त हो जायेगा तथा आज जो समाज बलात्कार, देशद्रोह, विद्रोह या अन्य अनैतिक कार्यों में व्याप्त है वह स्वतः समाप्त हो जायेगा क्योंकि, धर्म के आचरण के कारण ही प्रजाजनों में या किसी भी व्यक्ति में नैतिकता का विकास होता है, जैसे ही नैतिकता हमारे समाज में आयेगी सभी समस्याएँ लगभग स्वतः समाप्त हो जायेंगी। इस लिए इस शोधपत्र के द्वारा पहले राजा में ही एक आदर्श शासक बनने के लिए प्राचीन ग्रन्थों में वर्णित आदर्श तत्व एवं धर्म को चिन्हित कर अपनाने हेतु प्रेरित किया गया है जिससे वर्तमान भारत की समस्या को सुलझाया जा सकता है। राजा का राजधर्म आज वर्तमान परिदृश्य में आवश्यक हो गया है। राजा या शासक को अपने राजधर्म की जानकारी नहीं होने के कारण वे अपने कार्यों से अलोकप्रिय हो रहे हैं। इसलिए यह शोधपत्र लोकप्रशासन, राजनीति एवं समाजशास्त्र के लिए अत्यन्त उपयोगी है। इसके द्वारा वर्तमान शासकों को अच्छे कार्यों को करने एवं उच्चगुणों को अपनाने की प्रेरणा मिलेगी।

संदर्भ सूची

1. 'धर्ममेकं सहायार्थं वरयध्वे सदा नराः।' (विष्णु पुराण अ0–20)
2. 'प्रजापरिपालनं वर्णश्रमाणं सर्वे स्वधर्मे व्यवस्थापनम्।' (विष्णु पुराण अ0–03)
3. 'नास्ति सत्यात् परोधर्मो नानृतात् पातकं परम्।' (महाभारत, अनुशासनपर्व अ0–141)
4. महाभारत, अनुशासनपर्व अ0–111 / 14–15
5. महा. श. 59 / 14
6. ''राजा हि पूजितो धर्मस्ततः सर्वत्र पूज्यते। यद् यदाचरते राजा तत प्रजानां स्म रोचते।।'' (महा. शां. 74 / 4)
7. ''तं प्रजासु विधर्माणं रागद्वेशवशानुगत्। मन्त्रपूतैः कुशैर्जध्नुऋशयो बह्मवादिन।।'' महा0 शा0 59 / 94
8. स्कंदपुराण, धर्मारण्य 34 / 38–40
9. महा0 शां 87 / 8
10. महा0 शां. अध्याय 105, पृ.सं0 4696
11. ''सर्वो धर्मा राज्ञधर्मप्रधानः।'' महा.शां. अध्याय 63 / 27, 29
12. ''उपकरायलोकस्य त्रिवर्णस्थापनाय च। नवनीत सरस्वत्या बुद्धिरेशा प्रभाविता।।'' महा0 शां, अध्याय–59 / 76
13. ''अधर्मयुक्त विजयो ह्यघ्रवोऽस्वर्ग्य एवं च। सादयत्येश राज्ञानं मही च भरतशर्भः।'' महा0 शां., अध्याय–96, पृ0सं0 4670
14. महा0 शां., अध्याय–120, पृ0सं0 4728
15. महा0 शां., अध्याय–120, पृ0सं0 4728
16. मैकियावेली, 'द प्रिन्स' अ. 4 / 185
17. ''यज्जीवितं वाचिरांशुसमानं क्षण भंगुरम्। तच्चेद्धर्मकृते याति यातुदोशोऽस्ति को ननु।'' (स्कंद, मा0 पुराण 1 / 21–22
18. गउड़ी सुखमनी महला–5, पृ0 सं0 278
19. सत्यमेव जयते नानृतम्। (मुण्डक 3 / 1 / 6)
20. 'यास्मिन धर्मो विराजते तं राजनं प्रयक्षते।'
21. ''धर्मो रक्षति रक्षितः '' मनु–8 / 15
22. महा0 वनपर्व, अध्याय 35 / 32
23. ''धर्म एवं हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।'' (महा0 वनपर्व 313 / 128)
24. ''न राम सदृशो राजा भूमौ नीति मानभूत।'' (शुक्रनीति 5 / 57)
25. ''अहिंसा सूनृता वाणी सत्यं शौचं दयां क्षमा। वर्णिनां लिग्ड़िनां चैव सामान्यो धर्म उच्चते।।'' (अग्निपुराण 239 / 45)
26. महा0 शां., अध्याय–64 / 21
27. महा0 शां., अध्याय–68 / 40–41
28. महा0 शां., अध्याय–57 / 13–14
29. महा0 शां., अध्याय–61 / 125
30. ''ब्राह्मणानां क्षतत्राणात् ततः क्षत्रिय उच्चते। प्रथिता धर्मतच्श्रेयं पृथिवी बहुभिः स्मृता।।'' महा.शा., अध्याय–61 / 126
31. 'आत्मानं प्रथमं राजा विनयेनोपपाद्येत्'
32. ''पर हित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।।'' राम. च. मा. 7 / 4111
33. ''यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारतः। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्'' गीता 4 / 7
34. '' मन्युस्तु हन्तातु पुरुषस्य धैर्यम्।'' वनपर्व–34 / 5
35. सभापर्व 79 / 2
36. ''इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति। तदा तदावतोर्याहं करिश्याम्यरि संक्षयम्।'' (श्री दुर्गा सप्तशती 11 / 54–55)
37. रामचरित मानस– 7 / 43 / 1
38. स्कन्दपुराण, धर्मारण्य 34 / 38–40
39. ''क्षात्रोधर्मो ह्यादिदेवात् प्रवृतः। पश्चादन्येशेश्भूताश्च धर्माः।।'' (महा. शांति 64 / 21)